मजबूर बैंक कर्मी के हाथों ग्राहक को ही लुटवा रही है मोदी सरकार

ग्राउंड जीरो से विवेक की रिपोर्ट

क्या आप बता सकते हैं कि बैंक और बैंक कर्मी के बीच ज्यादा बुझा-बुझा कौन दिखता है? इसके बावजूद कि मोदी सरकार के अंतरिम वित्त मंत्री पीयूष गोयल ने सरकार के जाते जाते अंतरिम बजट भी उसी अंदाज में रखने की कोशिश की जिसमे वो रेल को चलाते रहे हैं। यानी जो चमकता हुआ दिखा सकें वो दिखा दो, बाकी देखा जाएगा। तब भी, आज बैंकों की दशा कितनी खराब है उसका अंदाजा लगाना कोई मुश्किल नहीं रह गया। इसी के साथ शामत आ गई है बैंक कर्मियों की भी।

जम्मू में कार्यरत आईडीबीआई बैंक के ब्रांच मेनेजर संकल्प ने बताया कि उन्होंने बैंक की नौकरी के लिए हाड तोड़ मेहनत की थी। आज जब वो शाखा प्रबंधक बन गए हैं तो पश्चाताप होता है कि काश थोड़ी मेहनत और की होती तो शायद दूसरी या इससे बेहतर नौकरी मिलती। इस घोर निराशा का कारण पूछने पर विकल्प ने बताया कि बैंक, जिसे कोर बैंकिंग करनी चाहिए अब बैंकिंग नहीं कर रहा। बेशक एक अच्छा बैंक कर्मी लोन देगा, और अन्य सभी बैंकिंग के काम करेगा और इन सबके साथ उसका ग्राहक के साथ बर्ताव भी बहुत अच्छा होगा। परन्तु सब होने के बावजूद आज उसे अच्छा बैंक कर्मी नहीं माना जाएगा यदि वो बीमा नहीं बेचता है।

जबकि एक अन्य बैंककर्मी बेशक अपने बैंकिंग के काम में कामचोर हो पर यदि वह बीमा बेच पा रहा है तो टॉप मैनेजमेंट उसे सर आखों पर बैठा लेता है। दूसरी तरफ यदि एक बैंक कर्मी अपने कोर बैंकिंग को बेहतर और ईमानदारी से पूरा करता है तो भी उसे उच्च अधिकारियों से सिर्फ और सिर्फ जलालत मिल रही है। संकल्प की मानें तो बैंक अपने कोर बैंकिंग से जितना कमाता है उसका मात्र बारहवां हिस्सा ही बीमा बेच कर प्राप्त कर रहा है। इतने गैर जरूरी कार्य के लिए बैंक प्रशासन ने अपने कर्मियों का जीवन दूभर कर दिया है।

ग्रामीण पृष्ठभूमि से आने वाले नवीन एसबीआई में क्रेडिट इंचार्ज के पद पर कार्यरत हैं। नवीन ने बताया कि फरीदाबाद से सटे बदरपुर में उनके गाँव के सैकड़ों लोग कामगार मजदूर के तौर पर बसे हुए हैं। सभी का खाता नवीन ने फरीदाबाद सेक्टर 16 के एसबीआई ब्रांच में खुलवाया था। आज ये बैंक उन गरीबों को लूटने पर उतारू हैं। यदि रोटी रोजी का प्रश्न न हो तो उनको अपने ही भाई बंधुओं का गला काटना अखरता है।

नवीन के अनुसार, पहले सरकारी बैंक निजी बैंकों की तरह पेश नहीं आते थे परंतु आज यही बैंक एक सूदखोर साहूकार की भूमिका में हैं। चेक बुक, एटीएम, एसएमएस तक के पैसे लेने के बाद भी यदि खाते में तय रकम से कम राशि है तो फाइन लगता है। इसके बावजूद यदि ग्राहक जीरो बैलेंस अकाउंट खुलवाता है तो उसे माह में सिर्फ 5 बार अपने खाते में किसी भी माध्यम से पैसा निकालने की अनुमति है। पांच से अधिक होने पर अतिरिक्त भार वसूला जाता है। ज्यादातर ऐसा होता ही है कि कामगार अपने हर सप्ताह की जमाराशि खातों में पांच से अधिक बार में जमा करते हैं और कई बार ऐसा भी होता है कि किसी लोन की ईएमआइ काटने पर भी एंट्री बढती है और शुल्क इन गरीब कामगारों से वसूला जाता है।

बैंक आफ इंडिया की एक प्रबंधक ने अपना नाम न उजागर करने की शर्त पर बताया कि अब बैंक एक लुटेरे संस्थान के रूप में सामने आने लगे हैं। तरह तरह के शुल्क वसूलने का कारण यही है कि बैंकों के पास पैसा नहीं है। पर विडम्बना ये है कि पिछले साल देश के सभी 21 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने जितना भी पैसा आम नागरिक की जेब से इस तरह के शुल्क वसूल कर कमाया उसका 40 प्रतिशत सरकार ने बड़े उद्योगपतियों का माफ कर दिया। ये अन्धकार ही है कि जिन लोगों का एनपीए होने में कोई हाथ नहीं उनसे ही एनपीए को वसूलने की व्यवस्था जारी है।

बैंक प्रबंधक ने आगे बताया कि बैंक के पास एक तो पैसा नहीं है ऊपर से एनपीए की समस्या बढती जा रही है, इसलिए सरकार बैंक प्रशासन के साथ मिलकर पैसा वसूलने के नए नए हथकंडे अपना रही है। इसी में एक हथकंडा बैंक कर्मियों को जबरन बैंक के शेयर बेचना है। अधिकारी स्तर को 2.5 लाख और क्लर्क को 1.5 लाख के शेयर खरीदने अनिवार्य हैं। जोनल हेड अरविन्द रोज व्हाट्सएप्प ग्रुप पर सुबह-सुबह सबको 14 फरवरी से पहले शेयर खरीदने का मेसेज कर दबाव बना रहे हैं। बैंक प्रबंधकों को 31 जनवरी तक डीमेट अकाउंट खुलवाने के मौखिक निर्देश थे और शेयर खरीदने थे।

उन्होंने बताया कि सबसे अधिक हास्यास्पद तो ये था कि जिस मैनेजमेंट और कर्मचारी संगठन में छत्तीस का रिश्ता रहता है आज उन दोनों में इस मुद्दे पर समरसता देखने को मिल रही है। अधिकारी संगठन के अध्यक्ष आरएसएस के खासमखास संतोष सिंह हैं तो जोनल हेड अरविन्द भी मोदी सरकार के चमचे हैं। बैंक कर्मचारियों ने जब इस फतवे के खिलाफ कर्मचारी संगठन से आवाज उठाने की मांग की तो इन संघी गुर्गों का जवाब था कि हमारी मातृत्व संस्था को आज हमारी जरूरत है। इसी संस्था से हम कमाते हैं तो यदि आज अपनी कमाई का सिर्फ एक हिस्सा इसको देना पड़ रहा है तो बढ़-चढ़ कर भाग लेना चाहिए।

बैंक आफ इंडिया की ही एक अन्य कर्मी ने कहा कि इतनी बड़ी रकम कोई घर में रख कर तो नहीं बैठा है। जेडओ के लिए ये मामूली रकम हो सकती है पर क्या सभी स्तर के कर्मियों से ऐसी उम्मीद करना तार्किकता है?

33 वर्षीय विकास, कानपुर सिविल लाइन्स बैंक आफ इंडिया की ब्रांच में कार्यरत हैं। उन्होंने बताया कि शेयर खरीदने के लिए सभी लोगों को मजबूर किया जा रहा है। जबकि सच्चाई ये है कि सेबी के नियमानुसार किसी को भी शेयर खरीदने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। विकास की बहन की शादी में पहले ही बड़े हुए खर्च के लिए उन्होंने रिश्तेदारों से उधार लिया है। अब इस तरह की जबरदस्ती में भी वो नहीं खरीद सकते शेयर। जो कर्मी थोड़ा मुखर होकर विरोध करना चाहते हैं उनको इस बात के संकेत दिए जा रहे हैं कि यदि शेयर नहीं खरीदे तो अन्य हथकंडों से भी मैनेजमेंट उन्हें परेशान कर सकता है। इसी डर से दबी जुबान में ही सभी इसकी भर्त्सना कर रहे हैं।

बैंक आफ बड़ोदा में 10 वर्षों से क्रेडिट विभाग में कार्यरत गगनदीप कौर के अनुसार सरकारी नीतियों ने बैंक की इज्जत और पैसा सब डुबो दिया है। 10 करोड़ तक के लोन वालों की तो बैंक ही मां-बहन कर देता है। यानी कि इतने वालों से बैंक वापस वसूल लेता है पैसे उनकी पगड़ी उछालने के दम पर। पर इससे ज्यादा के लोन वाले ज्यादातर वे लोग हैं जिनकी सेटिंग ऊपरी स्तर तक होती है। इस ऊपरी सेटिंग के दबाव में ऐसे तमाम लोगों को लोन दिया गया जिनका पहले से ही अंदाजा होता है कि एनपीए हो जाएगा। अब जब लोन एनपीए हो रहे हैं तो बैंक को प्रोविजनिंग करनी पड़ती है। और सारा पैसा इन्ही सब में फंसा बैंक आज लेंडिंग तक नहीं कर पा रहा।

साथ ही बैंक की नौकरियों से युवाओं का मोहभंग हो रहा है। सेवानिवृत होने वाले कर्मियों की संख्या बहुत ज्यादा है। परंतु जहाँ पहले सरकार पीओ स्तर पर 15 हजार तक की भर्ती लेती थी,अब घटकर ये सीट 5 हजार के लगभग हो गई हैं। इसका असर ये हुआ है कि काम के बोझ में अपना निजी जीवन कुछ भी नहीं रहा। युवा ये सोच कर भी बैंक से दूर भाग रहे हैं कि जब इतने ही काम में उन्हें प्राइवेट बैंक में अधिक तनख्वाह मिलेगी तो सरकारी में क्यों रहना। एक जॉब सिक्यूरिटी वाली बात थी सरकारी बैंक की नौकरी में तो जब आईडीबीआई को एलआइसी के सुपुर्द कर दिया गया और अब संभावना है कि एलआइसी अपनी हिस्सेदारी घटाएगी तो ये फैक्टर भी समाप्त ही समझा जाए।

इन सब खबरों के बीच खबर आ रही है कि एक अन्य कंपनी डीएचएफएल ने 31 हजार करोड़ का घपला कर दिया है। कोबरापोस्ट की तहकीकत में सैकड़ों करोड़ रुपए की टैक्स चोरी का भी खुलासा हुआ है। कंपनी के मालिकों ने अपनी सहायक और शैल कंपनियों के जरिए दो सौ करोड़ रुपए का चंदा भारतीय जनता पार्टी को दिया है।

आम आदमी को बजट के गणित में उलझा कर सरकार पूंजीपतियों को लूटने के मार्ग प्रशस्त करा रही है। मजे की बात ये है कि जिस पैसे को ये पूंजीपति लूट-लूट कर भाग रहे हैं उसकी भरपाई वापस आम जनता से की जा रही है। जनता की सहनशक्ति इतनी है कि वह भी आवाज नहीं उठा रही। फ्रांस में ईधन के दामों को लेकर येलो वेस्ट का एक बड़ा आन्दोलन हो गया पर भारत में लोग नोट बदलवाने से लेकर तेल भरवाने तक लाइन में लगे हुए हैं।

देश का प्रधानमंत्री तक कोई भी आंकड़ा, किसी भी समय और किसी भी मंच से फेंक देता है वो भी बिना किसी शोध के। ये आश्चर्य ही है कि उसके झूठ और फरेब का उसके चमचे तालियों से स्वागत करते हैं जबकि वह खुद बोल चुका है कि मुझे जूतों और चप्पलों से पीटना यदि कमी रह जाये। जनता तो अपनी भंडास चुनाव में निकाल लेगी लेकिन बैंक कर्मी न अपना रोना रो पा रहे हैं और न बैंकों को डूबने से बचा पा रहे हैं।

बैंककर्मी हो रहे हैं ब्लैकमेल के शिकार

Dear all,
All branch heads to ensure that applications of all staff members, who do not have demat accounts, for opening of demat accounts must reach ZO by tomorrow evening without fail.
All those who have demat accounts must file their application for allotment of shares by tomorrow evening without fail.
Treat it very important & urgent. This task has to be completed by tomorrow evening positively.
Arvind
Zonal head

बीके अस्पताल की बिगड़ती हालत का बोझ दिल्ली पर

फ़रीदाबाद (म.मो.) खान अब्दुल ग़फ्फार खान यानी बादशाह खान के नाम से पचास के दशक में बना यह अस्पताल उस समय की 20-25 हज़ार की आबादी के हिसाब से बनाया गया था। उस समय की आवश्यकताओं के लिये यह पर्याप्त भी था; हरामखोरी व रिश्वतखोरी नगण्य थी; परन्तु समय के साथ-साथ औद्योगिक शहर फ़ैलता चला गया। आबादी 20-25 हजार से 20-25 लाख हो गयी। अस्पताल की इमारत भी जर्जर हो चली थी तो नई इमारत की योजना दशकों तक ठंडे बस्ते में पड़े रहने के बाद बनी तो कुल योजना का मात्र पांचवां भाग।

कहने को यह ज़िला अस्पताल 200 बेड का है परन्तु वास्तव में 158 बेड ही हैं। झूठ बोलने में माहिर सरकारी तंत्र ने आरटीआई द्वारा मांगी गयी सूचना में अपने कुल बेडस की संख्या निम्न प्रकार से 200 बताई।

कैजुअलटी-17, मेडिकल वार्ड-42, सर्जिकल वार्ड-45, एमसीआई (मेडिकल काऊंसिल ऑफ़ इंडिया) के नार्म्स के अनुसार कैजुअल्टी, निक्कू, लेबर रूप व ऑपरेशन थियेटर के बेडस को इस गणना में शामिल नहीं किया जाता। दरअसल डॉक्टरों व स्टाफ़ के अभाव में तथा कॉर्डिक व डायलेसिस सेन्टर के लिये प्राइवेट कम्पनियों को इमारत में जगह देने के लिये बेडस की संख्या घटती चली गयी। उक्त झूठी सूचना मिलने के बाद '**मज़दूर मोर्चा**' रिपोर्टर ने खुद व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक वार्ड में जाकर गिनती की तो पाया:

सर्जिकल तथा हड्डी वार्ड में 47, मेडिकल वार्ड में 42 जिनमें से 4 बेड पुलिस प्रहरियों के सोने हेतु हैं तो बचे 38 बेड, बच्चा वार्ड में 39, जच्चा बच्चा वार्ड में 34 हैं जबकि लेबर रूम के 14 बेड को भी वार्ड में गिनते हैं तथा कैजुअल्टी में 14 बेड हैं।

आरटीआई द्वारा मिली सूचना के अनुसार वर्ष 2015 में डिलीवरी हेतु बीके अस्पताल आने वाली महिलाओं में से 792, 2016 में 691, 2017 में 718 को दिल्ली के सफ़दरजंग अस्पताल रेफ़र करके अपना पल्ला झाड़ लिया। इसी तरह हड्डी विभाग ने भी सैंकड़ों की संख्या में मरीज़ों को दिल्ली रैफ़र कर के अपने कर्त्तव्य की इति श्री कर ली। जाहिर है यह सब अपर्याप्त चिकित्सा सुविधाओं के चलते हो रहा है। यहां गौरतलब यह भी है कि इससे भी बड़ी संख्या में मरीज सीधे ही दिल्ली पहुंचते हैं क्योंकि उन्हें पता होता कि बीके अस्पताल में समय बर्बाद करने का कोई लाभ नहीं। इसके अलावा कई गुणा मरीज़ जो साधन-सम्पन्न होते हैं, बीके की ओर झांकते तक भी नहीं। करीब 8 लाख परिवार ईएसआई कवर्ड भी बीके नहीं जाते। इस सबके बावजूद सरकार का यह अस्पताल मरीज़ों को सम्भाल पाने में असमर्थ है।

इसके लिये जहां पहले कांग्रेसी सरकारें जिम्मेदार रही हैं वहीं अब भाजपा की खट्टर सरकार जिम्मेवार है। जो खट्टर हर ज़िले में मेडिकल कॉलेज खोलने का राग चार साल तक गाते रहे, अपने मौजूदा अस्पतालों को चुस्त-दुरुस्त नहीं कर पा रहे है क्योंकि यह उनकी प्राथमिकता में कहीं नहीं ठहरता। मामूली सी सूचना देने में 7 माह लगा दिये, वह भी अपील डालने पर दी।

बीके अस्पताल का प्रशासन जनता को पर्याप्त चिकित्सा सुविधा देने में तो फ़िसड्डी है ही मामूली सी सूचना देने में भी यहां के प्रशासन की जान निकलती है। दिनांक 9 मई 2018 को इस संवाददाता ने अस्पताल से कुल बिस्तरों की संख्या व रैफ़र होने वाले मरीज़ों की संख्या जानने के लिये आरटीआई एक्ट के तहत आवेदन किया था। आवेदन के वक्त ही पहला ड्रामा तो यह हुआ कि सम्बन्धित कर्मचारी दस रुपये बतौर शुल्क नकद लेने को तैयार नहीं था। उसका कहना था कि पोस्टल आर्डर या बैंक ड्राफ़्ट लाओ जबकि एक्ट में नकद शुल्क का प्रावधान है। घंटों की मशक्कत के बाद प्रशासन ने नकद शुल्क स्वीकार किया। सूचना देने के नाम पर आरटीआई एक्ट का मजाक उड़ाते हुए अस्पताल के अधिकारियों ने आवेदक को 3 रजिस्टर्ड पत्रों द्वारा केवल यह सूचित किया कि फ़लां अधिकारी सूचना देगा। करीब 7 माह तक यह ड्रामा चलता रहा। हारकर नवम्बर 2018 में प्रथम अपील दायर की गयी तो कहीं जाकर मध्य दिसम्बर तक मांगी गयी सूचना दी गयी, वह भी आधी-अधूरी व गलत। मूर्ख अधिकारियों के शायद यह ग़लतफ़हमी है कि वे सच्चाई को छिपा कर एवं ग़लत सूचना देकर सरकार अथवा अपने विभाग की गिरती हुई साख को बचा रहे हैं।

प्रथम अपील में सिविल सर्जन से हो गयी मुठभेड़: सभी पत्रकारों को चोर बताया

प्रथम अपील डालने के बाद सूचना तो मिल गयी थी लेकिन आधी अधूरी एवं ग़लत। ऐसे में अपील के लिये दिये हुए समय 3 बजे दिनांक 25 जनवरी को आवेदक सिविल सर्जन के दरवाजे पर 10 मिनट पहले ही जा बैठा। तीन बज कर पांच मिनट पर सिविल सर्जन दो-चार लोगों के साथ अपने दफ़्तर से निकल कर घर जाने लगे तो उन्होंने बाहर बैठे आवेदक से पूछ लिया कि कैसे बैठे हो? आवेदक ने बताया कि अपील की सुनवाई के लिये बुलावा आया था। इस पर डॉ. अरोड़ा ने कहा कि अभी तो वे लंच के लिये जा रहे हैं जवाब में आवेदक ने कहा कि फ़िर उसे यहां 3 बजे क्यों बुलाया गया था? कोई जवाब बनता न देख कर उन्होंने बड़ी झुझलाहट के साथ कहा कि चलो पहले आपकी अपील सुन लेते हैं।

डॉ. अरोड़ा सीट पर बैठ तो गये लेकिन झुंझलाहट अभी तक बाकी थी जिसे प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि यह तो कोई तरीका नहीं था बात करने का, उन्होंने साधारण भाव से पूछ ही लिया था कि कैसे बैठे हो तो इस तरह जवाब नहीं देना चाहिये, उम्र का तो कुछ लिहाज रखना चाहिये था। आवेदक ने भी पलट कर कहा कि जब किसी को समय देकर बुलाते हो तो उन्हें भी समय की पाबंदी समझनी चाहिये, रही बात उम्र की तो आवेदक 68 वर्ष का, यानी उनसे 13-14 साल बड़ा। अपनी तिलमिलाहट को दबाने का दिखावा करते हुए उन्होंने बात पलटी तो आवेदक ने बीके अस्पताल की बदहाली, स्टाफ़ एवं संसाधनों की कमी का जिक्र चलाया तो वे इतनी बुरी तरह से भड़क गये जैसे उन पर खौलते तेल के छींटे मार दिये गये हों। बुरी तरह तिलमिलाते हुए बोले कि कैसे कह सकते हो यहां स्टाफ़ व डॉक्टरों की कमी है या मरीज़ों को ढंग से अटैंड नहीं किया जाता? पूरी धमकी के साथ कहा कि वे अभी इस बयान को लिख कर सरकार को भेजेंगे तथा इस तरह के ग़लत आरोप लगाने के लिये सरकार से कार्यवाही करायेंगे।

आवेदक ने भी पलट कर कहा कि जरूर लिखो और वह अपनी कही बात पर कायम रहेगा तथा दस्तखत भी करेगा। इतना सुनते ही डॉक्टर साहब झाग की तरह बैठ गये और आवेदक के पेशे के बारे में पूछा। पत्रकारिता का पेशा जानने के बाद तो वे और भी चौड़े हो कर कहने लगे कि मीडिया वाले तो सारे चोर होते हैं, यदि वे भी उन सबकी पोल खोलने लगे तो क्या होगा? आवेदक ने जवाब दिया कि लगता है आपको आज तक पत्रकार कोई मिला ही नहीं केवल चोरों से वास्ता पड़ा है और हिम्मत है तो जरूर उनकी पोल खोलें। बार-बार मुंह की खाने के बाद डॉक्टर साहब काफ़ी ढीले तो हो गये परन्तु अपने स्टाफ़ के सामने हुई इस फ़जीहत से वे काफ़ी परेशान भी नज़र आये।

झेंप उतारने के लिये अपने अस्पताल एवं अपनी प्रशासनिक योग्यता का बखान करते हुए कहा कि उनके अस्पताल का कोई एक मरीज़ तो बताओ जिसका इलाज ठीक से न हुआ हो? इस हास्यास्पद सवाल को सुनकर हंसी भी आई उनके सरकार भक्त होने का एहसास भी हुआ। जिस सिविल सर्जन को अपने अस्पताल में हो रहे मरीज़ों की दुर्दशा का ही ज्ञान नहीं उसे क्या बताये। फ़िर भी आवेदक ने एक साधारण डिलीवरी का केस बताया जिसे उनके अस्पताल ने सफ़दरजंग दिल्ली भेज दिया था। वहां की दुर्दशा देख कर परिजन महिला को वापस ले आये और वाईएमसीए रोड स्थित सेक्टर 11 के अश्वनी अस्पताल में साधारण डिलीवरी हो गयी। जवाब में डॉक्टर साहब ने भारी-भरकम मेडिकल जुमले सुना कर अपनी सफ़ाई दे दी। यानी जब कोई अपनी ग़लती या कमी ही स्वीकार नहीं करेगा तो वह सुधार क्या करेगा?

प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक सतीश कुमार ने अपने स्वामित्व में एजीएस पब्लिकेशन्स, डी-67, सैक्टर-6, नोएडा से मुद्रित करवा कर 1 डी/2बी.पी. नियर हार्डवेयर चौक, एनआईटी फरीदाबाद से प्रकाशित किया। Postal Reg. No. L/H.R/FBD/463-06